(निर्णय के लिए)

सुप्रीम कोर्ट इंडिया
कार्यवाही का रिकॉर्ड

आपराधिक अपील नंबर। 410-411/2015

रवि शर्मा अपीलकर्ता

बनाम

राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार) एवं अन्य। प्रतिवादी(ओं)
([सुनने वाले: माननीय अभय एस. ओका और माननीय एमएम सुंदरेश, जे.जे.]
आईए नंबर 3780/2015 - जमानत की मंजूरी
आईए नंबर 3782/2015 - सजा का निलंबन

दिनांक: 11-07- 2022 इन अपीलों को
आज निर्णय सुनाने के लिए बुलाया गया था ।

अपीलकर्ता(ओं) के लिए

श्री मोहित डी. राम, एओआर

प्रतिवादी(ओं) के लिए

श्री बीवी बलराम दास, एओआर

श्री आशीष कुमार, एओआर

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - s.378-भारतीय साक्ष्य

अधिनियम, 1872 एस। 27 - एफ. आई. आर. दर्ज की गई जब एक मृत शरीर पी. डब्ल्यू.-2 (मृतक के भाई) ने मृत शरीर की पहचान की-पी. डब्ल्यू.-1, मृतक के पिता और पी. डब्ल्यू.-2 दोनों के बयान दर्ज किए गए-दोनों ने अपीलकर्ता-आरोपी पर संदेह जताया-निचली अदालत ने अपीलकर्ता के पक्ष में संदेह का लाभ देते हुए आदेश पारित किया

बरी करना-उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को दोषी ठहराने का आदेश दिया

अपील की गईः उच्च न्यायालय ने एस के लिए निर्धारित कानूनी मापदंडों के भीतर कार्य नहीं किया है। 378 Cr.PC उच्चतम न्यायालय के विभिन्न निर्णयों से की गई बरामदगी संदिग्ध थी क्योंकि किसी भी स्वतंत्र गवाह ने उस पर हस्ताक्षर नहीं किए थे-अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य में बहुत सारे विरोधाभास-उद्देश्य स्थापित नहीं हुआ-अभियुक्त के अपराध की ओर इशारा करने के लिए परिवेशी साक्ष्य की श्रृंखला पूरी नहीं थी-बैलिस्टिक विशेषज्ञ की रिपोर्ट भी अनिर्णायक है-उच्च न्यायालय का निर्णय अदालत को दरकिनार कर दिया गया-निचली अदालत द्वारा बरी करने के आदेश को बहाल कर दिया गया।

जाफरुद्दीन और अन्य बनाम। केरल राज्य 2022 एस. सी. सी.

ऑनलाइन एससी 495; मोहन उपनाम श्रीनिवास उपनाम सीना उपनाम

तारसेम कुमार बनाम। दिल्ली प्रशासन (1994) पूरक 3 एस. सी. सी. 367 [1994] 2 पूरक। एस. सी. आर. 740; पदला वीरा

रेड्डी बनाम। ए. पी. राज्य (1989) 2 पूरक एस. सी. सी. 706;

चंद्रकांत गणपत सोवितकर बनाम। महाराष्ट्र राज्य

(1975) 3 एस. सी. सी. 16-संदर्भित। मामला कानून संदर्भ

(2021) 3 एस. सी. सी. 687

उस पर भरोसा करें

पैरा 8

257 [2022] 12 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[1994] 2 पूरक। एससीआर 740

संदर्भित

किया गया है

पैरा 13

(1989) 2 पूरक एस. सी. सी. 706

संदर्भित

किया गया है

पैरा 14

(1975) 3 एससीसी 16

संदर्भित

किया गया है

पैरा 15

आपराधिक अपील न्यायनिर्णयः आपराधिक अपील

नं. 410-411 2015 से।

17.12.2014 और 24.12.2014 दिनांकित निर्णय और आदेश से

सी. आर. एल. में नई दिल्ली में दिल्ली उच्च न्यायालय। ए. नं. 585 और 2014 का 1611।

कृष्ण कुमार, सुश्री सुनीता अरोड़ा, मोहित डी. राम, शिवम बेदी,

अनुभव शर्मा, अधिवक्ता। अपीलार्थी के लिए।

सुश्री ऐश्वर्या भाटी, एएसजी, राजन कुमार चौरसिया, सुश्री रुचि

कोहली, सुश्री अर्चना पाठक दवे, अपूर्व कुरुप, जी. एस. मक्कर, बी. वी. बलराम दास, आर. पी. लूथरा, आशीष कुमार, अधिवक्ता। उत्तरदाताओं के लिए।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

न्यायालय ने निम्नलिखित
निर्णय सुनाया

संक्षेप में तथ्य:

2. दिनांक 30.05.2011 को एक शव मिलने पर प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गयी। मृतक के भाई PW2 ने शव की पहचान की। पीडब्लू1, मृतक के पिता और पीडब्लू2 दोनों के बयान दर्ज किए गए हैं, जिसमें किसी विशिष्ट संदिग्ध का संकेत नहीं मिला है। जांच अधिकारी ने जांच की और नक्शा तैयार किया। अगले दिन, पीडब्लू 1 और 2 द्वारा आरोपी पर संदेह जताया गया, जो मृतक का दोस्त था। आरोपी को पकड़ने पर बंदूक के रूप में सामग्री की बरामदगी की गई। अधिनियम की धारा 27 के तहत स्केच के साथ अवलोकन महाज़ार और पुनर्प्राप्ति महाज़ार दोनों पर पुलिस अधिकारियों द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे, इस अपवाद के साथ कि बाद वाले पर पीडब्लू2 द्वारा भी हस्ताक्षर किए गए थे।

3. ट्रायल कोर्ट ने पीडब्लू 1 और 2 के साक्ष्य पर अविश्वास किया; पीडब्लू2 मकसद के संदर्भ में, और पीडब्लू1 इस आधार पर कि उसने अभियोजन पक्ष के मामले का समर्थन नहीं किया। इसने अधिनियम की धारा 27 के तहत की गई वसूली पर गंभीर संदेह पैदा किया । घटना स्थल से कारतूस के साथ बंदूक के बट का एक लकड़ी का टुकड़ा बरामद किया गया। इसमें से चार कारतूस मृतक की जेब से मिले।

4. यह पाते हुए कि मकसद साबित नहीं हुआ है और दोनों मौकों पर कई स्वतंत्र गवाहों की मौजूदगी के बावजूद बरामदगी संदिग्ध है, अदालत ने पहली बार में अपीलकर्ता के पक्ष में संदेह का लाभ देना उचित समझा।

5. दिल्ली उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने अंतिम बार देखे गए सिद्धांत के संबंध में ट्रायल कोर्ट द्वारा व्यक्त विचारों से सहमत होने के बावजूद, की गई वसूली के साथ जुड़े मकसद के संबंध में पीडब्लू 2 के साक्ष्य को स्वीकार कर लिया। हालाँकि ट्रायल कोर्ट ने बैलिस्टिक विशेषज्ञ

के साक्ष्य को खारिज कर दिया, जो अपीलकर्ता की बंदूक से संबंधित गोली के संबंध में अनिर्णायक रहा, जिससे मौत हुई, उच्च न्यायालय ने महसूस किया कि इस पर भरोसा किया जा सकता है। संयोगवश, यह माना गया कि बट का लकड़ी का टुकड़ा अपीलकर्ता का था। इसलिए, श्रृंखला बनाने वाली परिस्थितियाँ उसके प्रति अपराध को इंगित करने के लिए पर्याप्त थीं और तदनुसार उच्च न्यायालय ने उसे दोषी ठहराया।

6. अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वकील, श्री कृष्ण कुमार ने कहा कि ट्रायल कोर्ट के सुयोग्य फैसले को उच्च न्यायालय द्वारा अपने स्वयं के विचारों को प्रतिस्थापित करके उलट नहीं दिया जाना चाहिए था। ट्रायल कोर्ट के विचारों को प्रशंसनीय मानने के बाद, दोषसिद्धि नहीं दी जानी चाहिए थी। जैसा कि उच्च न्यायालय ने माना, परिस्थितिजन्य श्रृंखला में कोई लिंक नहीं था । मकसद कानून द्वारा ज्ञात तरीके से स्थापित नहीं किया गया है। परिस्थितिजन्य साक्ष्य के मामले में, मकसद अधिक महत्व रखता है। बैलिस्टिक विशेषज्ञ की राय को ट्रायल कोर्ट द्वारा सही ढंग से नोट किया गया था और वास्तव में अनिर्णायक होने के कारण अपीलकर्ता के पक्ष में इस्तेमाल किया गया था। जिस तरह से पहली बार में घटना स्थल के निरीक्षण के दौरान और उसके बाद अपीलकर्ता के कहने पर वसूली की गई, उस पर ट्रायल कोर्ट द्वारा उचित ही संदेह किया गया था। ट्रायल कोर्ट द्वारा बनाया गया संदेह दूर नहीं हुआ है। चूंकि ट्रायल कोर्ट के फैसले में कोई विकृति नहीं है, इसलिए उच्च न्यायालय के हाथों इसे पलटना अनुचित है।

7. सुश्री ऐश्वर्या भाटी ने पाया कि उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल ने कहा कि अपील पर निर्णय लेने में उच्च न्यायालय की शक्ति काफी व्यापक है। उच्च न्यायालय उन साक्ष्यों की पुनः सराहना कर सकता है जो वास्तव में उसने की थी। उच्च न्यायालय द्वारा प्रस्तुत ठोस कारणों में कोई विकृति नहीं है। पीडब्लू2 ने मृतक और अपीलकर्ता के बीच दुश्मनी के कारण मकसद के बारे में बताया है। यह, की गई वसूलियों के साथ, अपीलकर्ता को दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त आधार बनेगा।

8. मामले के गुण-दोष पर विचार करने से पहले, हम उच्च न्यायालय द्वारा एक अपील पर निर्णय लेते समय दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में ' सीआरपीसी ') की धारा 378 के दायरे को दोहराना चाहेंगे, जैसा कि स्थिति के अनुसार है। कानून बल्कि व्यवस्थित है. हम जफरुद्धीन और अन्य बनाम केरल राज्य (2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 495) में इस न्यायालय के हालिया फैसले के प्रासंगिक हिस्से को इस प्रकार उद्धृत करना चाहेंगे :

25. सीआरपीसी की धारा 378 को लागू करके बरी किए जाने के खिलाफ अपील से निपटते समय, अपीलीय अदालत को इस बात पर विचार करना होगा कि क्या ट्रायल कोर्ट के दृष्टिकोण को संभावित कहा जा सकता है, खासकर जब रिकॉर्ड पर साक्ष्य का विश्लेषण किया

गया हो । इसका कारण यह है कि बरी करने का आदेश आरोपी के पक्ष में निर्दोषता की धारणा को जोड़ता है। इस प्रकार, अपीलीय अदालत को बरी करने के ट्रायल कोर्ट के आदेश को उलटने में अपेक्षाकृत धीमी गति से काम करना होगा। इसलिए आरोपी के पक्ष में धारणा कमजोर नहीं होती बल्कि मजबूत ही होती है. इस तरह की दोहरी धारणा जो आरोपी के पक्ष में है, उसे स्वीकृत कानूनी मापदंडों पर गहन जांच से ही परेशान किया जाना चाहिए।

9. इस न्यायालय ने उपरोक्त निर्णय में कानून बनाते समय निम्नलिखित निर्णय को नोट किया है:

मिसालें:

• मोहन उर्फ श्रीनिवास उर्फ सीना उर्फ टेलर सीना बनाम कर्नाटक राज्य , [2021 एससीसी ऑनलाइन एससी 1233] जैसा कि नीचे दिया गया है:

“20. सीआरपीसी की धारा 378 राज्य को बरी किए जाने के आदेश के खिलाफ अपील करने में सक्षम बनाती है। सीआरपीसी की धारा 384 उन शक्तियों की बात करती है जिनका प्रयोग अपीलीय न्यायालय द्वारा किया जा सकता है। जब ट्रायल कोर्ट अभियुक्त को बरी करके अपना निर्णय सुनाता है, तो अपीलीय अदालत के समक्ष निर्दोषता की धारणा को बल मिलता है। परिणामस्वरूप, अभियोजन पक्ष पर जिम्मेदारी अधिक बोझिल हो जाती है क्योंकि इसमें निर्दोषता की दोहरी धारणा होती है। निश्चित रूप से, प्रथम दृष्टया न्यायालय के पास अपना फैसला सुनाने के अपने फायदे हैं, जिसमें गवाही देते समय गवाहों को व्यक्तिगत रूप से देखना शामिल है। अपीलीय न्यायालय से अपेक्षा की जाती है कि वह न केवल उसके सामने मौजूद साक्ष्यों की गहन, अध्ययनित जांच में शामिल हो, बल्कि स्वयं को संतुष्ट करने के लिए बाध्य है कि क्या ट्रायल कोर्ट का निर्णय संभव और प्रशंसनीय है। जब दो दृष्टिकोण संभव हों, तो बरी किए जाने के मामले में ट्रायल कोर्ट द्वारा लिए गए दृष्टिकोण का पालन गवाहों को देखने के लाभ के साथ-साथ स्वतंत्रता की कसौटी पर किया जाना चाहिए। भारत के संविधान का अनुच्छेद 21 भी आरोपी को बरी होने के बाद एक निश्चित तरीके से सहायता करता है, हालांकि पूर्ण नहीं। यह कहना पर्याप्त है कि अपीलीय अदालत को बरी किए जाने के मामले से निपटते समय खुद को आवश्यक भूमिका की याद दिलानी होगी।

21. प्रत्येक मामले की सत्य की ओर अपनी यात्रा होती है और यह न्यायालय की भूमिका है। सत्य को अपने समक्ष उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर खोजना होगा। इसमें व्यक्तिपरकता के लिए कोई जगह नहीं है, न ही अपराध की प्रकृति इसके प्रदर्शन को प्रभावित करती है। हमारे पास मामलों से निपटने के लिए अदालतों का एक पदानुक्रम है। एक अपीलीय अदालत मामले की संवेदनशीलता के आधार पर ट्रायल कोर्ट से किसी विशेष तरीके से कार्य करने की उम्मीद

नहीं करेगी। बल्कि इसकी सराहना की जानी चाहिए अगर कोई निचली अदालत संवेदनशीलता के बावजूद किसी मामले का फैसला अपनी योग्यता के आधार पर करती है।

22. कभी-कभी, अदालतों की अपनी बाधाएँ होती हैं। हम पाते हैं कि अलग-अलग अदालतों द्वारा अलग-अलग निर्णय लिए जा रहे हैं, अर्थात् एक तरफ ट्रायल कोर्ट और दूसरी तरफ अपीलीय अदालतें। यदि ऐसे निर्णय संस्थागत बाधाओं के कारण लिए जाते हैं, तो वे अच्छे संकेत नहीं हैं। जिला न्यायपालिका से मूलभूत अदालत होने की उम्मीद की जाती है, और इसलिए, उसे किसी मामले को अपनी योग्यता के आधार पर तय करने की मानसिक स्वतंत्रता होनी चाहिए अन्यथा यह एक नैतिक मंच पर दोषसिद्धि प्रदान करने वाली एक रूढ़िवादी बन सकती है। सामने रखी गई सभी सामग्रियों पर विचार करने के बाद दिए गए निर्णय पर दोषारोपण और निंदा से बचना चाहिए। अपीलीय न्यायालय से अपेक्षा की जाती है कि वह कोई भी टिप्पणी करने से पहले कुछ हद तक सावधानी बरतें।

23. इस अदालत ने बार-बार सीआरपीसी की धारा 378 के तहत बरी किए जाने के खिलाफ अपील पर विचार करते समय अपीलीय अदालत द्वारा जांच के दायरे पर कानून निर्धारित किया है। हम अनवर अली बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य , (2020) 10 एससीसी 166 में इस अदालत के हालिया फैसले पर भरोसा करने के अलावा उपरोक्त सिद्धांत को बढ़ाना नहीं चाहते हैं :

14.2. किसी न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए तथ्य के निष्कर्षों को कब विकृत माना जा सकता है, इसका निपटारा और विचार पूर्वोक्त निर्णय के पैराग्राफ 20 में किया गया है, जो इस प्रकार है: [बाबू बनाम केरल राज्य, [(2010) 9 एससीसी 189] :

“20. किसी न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए तथ्य के निष्कर्षों को विकृत माना जा सकता है यदि निष्कर्ष प्रासंगिक सामग्री को अनदेखा या बाहर करके या अप्रासंगिक/अस्वीकार्य सामग्री पर विचार करके निकाले गए हों। निष्कर्ष को विकृत भी कहा जा सकता है यदि यह "साक्ष्य के वजन के विरुद्ध" है, या यदि निष्कर्ष इतनी अपमानजनक रूप से तर्क की अवहेलना करता है कि तर्कहीनता के दोष से ग्रस्त है। (वीडियो राजिंदर कुमार किंद्रा बनाम दिल्ली एडमिनिस्ट्रेशन [(1984) 4 एससीसी 635], एक्साइज एंड टैक्सेशन ऑफिसर-कम-असेसिंग अथॉरिटी बनाम गोपी नाथ एंड संस [1992 सप्प (2) एससीसी 312], त्रिवेणी रबर एंड प्लास्टिक्स बनाम । सीसीई [1994 सप्लिमेंट (3) एससीसी 665], गया दीन बनाम हनुमान प्रसाद [(2001) 1 एससीसी 501], अरुवेलु बनाम राज्य, [(2009) 10 एससीसी 206] और गामिनी बाला कोटेश्वर राव बनाम।

एपी राज्य [(2009) 10 एससीसी 636])।" कुलदीप सिंह बनाम कॉमरेड मामले में इस न्यायालय के फैसले के बाद इसे आगे देखा गया है । पुलिस का [(1999) 2 एससीसी 10], कि यदि कोई निर्णय बिना किसी सबूत या पूरी तरह से अविश्वसनीय सबूत के आधार पर आता है और कोई

भी उचित व्यक्ति उस पर कार्रवाई नहीं करेगा, तो आदेश विकृत होगा। लेकिन अगर रिकॉर्ड पर कुछ सबूत हैं जो स्वीकार्य हैं और जिन पर भरोसा किया जा सकता है, तो निष्कर्षों को विकृत नहीं माना जाएगा, और निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा।

14.3. विजय मोहन सिंह बनाम कर्नाटक राज्य , [(2019) 5 एससीसी 436] के हालिया फैसले में , इस न्यायालय को फिर से धारा 378 सीआरपीसी के दायरे और उच्च न्यायालय के हस्तक्षेप पर विचार करने का अवसर मिला [कर्नाटक राज्य बनाम। विजय मोहन सिंह , 2013 एससीसी ऑनलाइन कर 10732] बरी किए जाने के खिलाफ अपील में। इस न्यायालय ने 1952 के बाद से इस न्यायालय के निर्णयों की श्रृंखला पर विचार किया। पैरा 31 में, इसे निम्नानुसार देखा और रखा गया है:

“31. उम्मेदभाई जाधवभाई बनाम गुजरात राज्य , [(1978) 1 एससीसी 228] में इस न्यायालय के समक्ष एक समान प्रश्न पर विचार किया गया था । इस न्यायालय के समक्ष मामले में, उच्च न्यायालय ने रिकॉर्ड पर सभी साक्ष्यों की पुनः सराहना करने पर निचली अदालत द्वारा पारित बरी करने के आदेश में हस्तक्षेप किया। हालाँकि, उच्च न्यायालय ने बरी करने के फैसले को पलटते हुए, आरोपी को बरी करते समय निचली अदालत द्वारा दिए गए कारणों पर विचार नहीं किया। उच्च न्यायालय के फैसले की पुष्टि करते हुए, इस न्यायालय ने पैरा 10 में निम्नानुसार टिप्पणी की और कहा:

'10. एक बार जब बरी करने के आदेश के खिलाफ अपील पर सही ढंग से विचार किया गया, तो उच्च न्यायालय स्वतंत्र रूप से पूरे सबूतों की फिर से सराहना करने और अपने निष्कर्ष पर पहुंचने का हकदार था। आम तौर पर, उच्च न्यायालय सत्र न्यायाधीश की राय को उचित महत्व देगा यदि वह साक्ष्य की उचित सराहना के बाद तय की गई हो। यह नियम वर्तमान मामले में लागू नहीं होगा जहां सत्र न्यायाधीश ने मामले की विशिष्ट परिस्थितियों में एक बहुत ही महत्वपूर्ण और निर्णायक पहलू की बिल्कुल गलत धारणा बनाई है।'

31.1. सांबशिवन बनाम केरल राज्य , [(1998) 5 एससीसी 412] में, उच्च न्यायालय ने विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित बरी करने के आदेश को उलट दिया और रिकॉर्ड पर पूरे साक्ष्य की पुनः सराहना करते हुए आरोपी को दोषी ठहराया, हालांकि, उच्च न्यायालय इस सवाल पर अपना निष्कर्ष दर्ज नहीं किया कि क्या सबूतों से निपटने में ट्रायल कोर्ट का दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से अवैध था या उसके द्वारा निकाले गए निष्कर्ष पूरी तरह से अस्थिर थे।

इस बात से संतुष्ट होने के बाद कि विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित बरी करने का आदेश विकृत था और कमजोरियों से ग्रस्त था, उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषी ठहराए जाने के आदेश की पुष्टि करते हुए, इस न्यायालय ने इसमें हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया । उच्च न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि का आदेश। उच्च न्यायालय द्वारा पारित

दोषसिद्धि के आदेश की पुष्टि करते हुए, इस न्यायालय ने पैरा 8 में निम्नानुसार टिप्पणी की:

'8. हमने यह सुनिश्चित करने के लिए अपील के तहत फैसले का अध्ययन किया है कि क्या उच्च न्यायालय उपरोक्त सिद्धांतों के अनुरूप है। हमने पाया कि उच्च न्यायालय ने दोशी मामले में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित तरीके से सख्ती से आगे नहीं बढ़ाया है [रमेश बाबूलाल दोशी बनाम गुजरात राज्य , (1996) 9 एससीसी 225] अर्थात। पहले इस सवाल पर अपना निष्कर्ष दर्ज करना कि क्या सबूतों से निपटने में ट्रायल कोर्ट का दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से अवैध था या उसके द्वारा निकाले गए निष्कर्ष पूरी तरह से अस्थिर थे, जो अकेले बरी करने के आदेश में हस्तक्षेप को उचित ठहराएगा, हालांकि उच्च न्यायालय ने एक प्रतिपादन किया है। अच्छी तरह से विचार किया गया निर्णय इसके समक्ष उठाए गए सभी विवादों को विधिवत पूरा करता है। लेकिन फिर क्या यह गैर-अनुपालन अपील के तहत फैसले को रद्द करने को उचित ठहराएगा? हम सोचते हैं, नहीं. हमारे विचार में, ऐसे मामले में, अदालत का दृष्टिकोण, जो एक अपीलीय अदालत के फैसले की वैधता पर विचार कर रहा है, जिसने ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित बरी करने के आदेश को पलट दिया है, खुद को संतुष्ट करने के लिए होना चाहिए यदि ट्रायल का दृष्टिकोण सबूतों से निपटने में अदालत स्पष्ट रूप से अवैध थी या उसके द्वारा निकाले गए निष्कर्ष स्पष्ट रूप से अस्थिर थे और क्या अपीलीय अदालत का निर्णय उन कमजोरियों से मुक्त था; यदि ऐसा है तो यह माना जाए कि ट्रायल कोर्ट के फैसले में हस्तक्षेप की आवश्यकता है। ऐसे मामले में, जाहिर तौर पर कोई कारण नहीं है कि अपीलीय अदालत के फैसले में खलल डाला जाए। लेकिन अगर दूसरी ओर अदालत इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि ट्रायल कोर्ट के फैसले में कोई खामी नहीं है, तो यह नहीं माना जा सकता कि बरी करने के आदेश में अपीलीय अदालत द्वारा हस्तक्षेप उचित नहीं था;

तो ऐसे मामले में अपीलीय अदालत के फैसले को रद्द करना होगा क्योंकि दो उचित विचारों में से, केवल बरी करने के समर्थन में ही खड़ा होना होगा। उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हम इस मामले में ट्रायल कोर्ट के फैसले की जांच करने के लिए आगे बढ़ेंगे।'

31.2. के. रामकृष्णन उन्नीथन बनाम केरल राज्य में , [(1999) 3 एससीसी 309], यह देखने के बाद कि यद्यपि अभियुक्त की ओर से उपस्थित विद्वान वकील की शिकायत में कुछ तथ्य है

कि उच्च न्यायालय ने सभी पर ध्यान नहीं दिया है। बरी करने का आदेश देने के लिए ट्रायल जज द्वारा दिए गए कारणों के आधार पर, इस न्यायालय ने यह पाते हुए उच्च न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के आदेश को रद्द करने से इनकार कर दिया कि बरी करने का आदेश दर्ज करने में सत्र न्यायाधीश का दृष्टिकोण उचित नहीं था और विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा कई पहलुओं पर निकाला गया निष्कर्ष टिकाऊ नहीं था। इस न्यायालय ने आगे कहा कि चूंकि सत्र न्यायाधीश द्वारा आरोपी को बरी करते समय प्रासंगिक/भौतिक साक्ष्य को खारिज करना उचित नहीं था, इसलिए उच्च न्यायालय साक्ष्यों की फिर से सराहना करने और अपने स्वयं के निष्कर्ष को दर्ज करने का पूरी तरह से हकदार था। इस न्यायालय ने चश्मदीदों के साक्ष्यों की जांच की और राय दी कि चश्मदीदों की गवाही को खारिज करने के लिए ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए कारण बिल्कुल भी सही नहीं थे। इस न्यायालय ने यह भी देखा कि ट्रायल कोर्ट द्वारा किए गए साक्ष्यों का मूल्यांकन स्पष्ट रूप से गलत था और इसलिए यह उच्च न्यायालय का कर्तव्य था कि वह विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित बरी करने के आदेश में हस्तक्षेप करे।

31.3. एटली बनाम उत्तर प्रदेश राज्य , [एआईआर 1955 एससी 807] में, पैरा 5 में, इस न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की और कहा:

'5. अपीलकर्ता के विद्वान वकील द्वारा यह तर्क दिया गया है कि निचली अदालत का फैसला दोषमुक्ति का है, इसलिए उच्च न्यायालय को अभियोजन पक्ष की ओर से दिए गए सबूतों की सराहना के आधार पर इसे तब तक रद्द नहीं करना चाहिए था जब तक कि वह निष्कर्ष पर नहीं पहुंच जाता। कि ट्रायल जज का निर्णय विकृत था। हमारी राय में, यह कहना सही नहीं है कि जब तक अपीलीय अदालत सीआरपीसी की धारा 417 के तहत अपील में इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंचती कि अपील के तहत बरी करने का निर्णय विकृत था, तब तक वह उस आदेश को रद्द नहीं कर सकती थी।

इस न्यायालय द्वारा यह निर्धारित किया गया है कि बरी करने के आदेश के खिलाफ अपील पर उच्च न्यायालय पूरे साक्ष्य की समीक्षा करने और निश्चित रूप से, अच्छी तरह से स्थापित नियम को ध्यान में रखते हुए अपने निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए खुला है। अभियुक्तों की बेगुनाही की धारणा कमजोर नहीं हुई है, बल्कि ट्रायल कोर्ट द्वारा पारित बरी के फैसले से मजबूत हुई है, जिसमें उन गवाहों के आचरण को देखने का लाभ था जिनके साक्ष्य उसकी उपस्थिति में दर्ज किए गए हैं।

यह भी अच्छी तरह से स्थापित है कि अपील की अदालत के पास दोषमुक्ति के आदेश के खिलाफ अपील में सबूतों की सराहना करने की उतनी ही व्यापक शक्तियाँ हैं जितनी कि दोषसिद्धि के आदेश के खिलाफ अपील के मामले में, शर्तों के अधीन जिसके साथ निर्दोषता का अनुमान लगाया जाता है

। आरोपी व्यक्ति ट्रायल कोर्ट में शुरू होता है और अपीलीय चरण तक भी जारी रहता है और अपीलीय अदालत को ट्रायल कोर्ट की राय को उचित महत्व देना चाहिए जिसने बरी करने का आदेश दर्ज किया था।

यदि अपीलीय अदालत उन सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए साक्ष्य की समीक्षा करती है, और विपरीत निष्कर्ष पर पहुंचती है, तो यह नहीं कहा जा सकता कि निर्णय ख़राब हो गया है। (इस संबंध में बार में उद्धृत मामलों को देखें, अर्थात् सूरजपाल सिंह बनाम राज्य [1951 एससीसी 1207]; विलायत खान बनाम यूपी राज्य । [1951 एससीसी 898]। हमारी राय में, इसमें कोई सार नहीं है अपीलकर्ता की ओर से यह तर्क उठाया गया कि उच्च न्यायालय द्वारा संपूर्ण साक्ष्यों की समीक्षा करना और अपने स्वयं के निष्कर्ष पर आना उचित नहीं था।'

31.4. के. गोपाल रेड्डी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य में , [(1979) 1 एससीसी 355], इस न्यायालय ने देखा है कि जहां ट्रायल कोर्ट खुद को काल्पनिक संदेहों से घिरा होने देता है, मामूली कारणों से विश्वसनीय सबूतों को खारिज कर देता है और उन सबूतों पर विचार करता है जो मुश्किल से ही संभव है, उच्च न्यायालय का यह स्पष्ट कर्तव्य है कि वह इसमें हस्तक्षेप करे। न्याय के हित में, ऐसा न हो कि न्याय प्रशासन का उपहास उड़ाया जाए।" अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित वरिष्ठ वकील ने कहा कि रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए ट्रायल कोर्ट द्वारा लिया गया दृष्टिकोण एक "संभावित दृष्टिकोण" है। यह प्रस्तुत किया गया है कि ट्रायल कोर्ट ने बरी करने के अपने निष्कर्षों के समर्थन में ठोस और वैध कारण दर्ज किए हैं। सीआरपीसी की धारा 378 के तहत , दोषमुक्ति के खिलाफ अपील और दोषसिद्धि के खिलाफ अपील के बीच कोई अंतर नहीं किया जाता है। पहले के मामलों की लंबी कतार पर विचार करके इस न्यायालय ने चंद्रप्पा बनाम कर्नाटक राज्य के फैसले में , [(2007) 4 एससीसी 415] एक आदेश के खिलाफ अपील से निपटने के दौरान अपीलीय न्यायालय की शक्तियों के संबंध में सामान्य सिद्धांत निर्धारित किए हैं। बरी होने का. प्रासंगिक निर्णय का पैरा 42 इस प्रकार है: (एससीसी पृष्ठ 432)

"42. उपरोक्त निर्णयों से, हमारे विचार में, दोषमुक्ति के आदेश के खिलाफ अपील से निपटने के दौरान अपीलीय अदालत की शक्तियों के संबंध में निम्नलिखित सामान्य सिद्धांत सामने आते हैं:

(1) एक अपीलीय अदालत के पास उन सबूतों की समीक्षा, पुनर्मूल्यांकन और पुनर्विचार करने की पूरी शक्ति है, जिन पर बरी करने का आदेश आधारित है।

(2) आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973 इस तरह की शक्ति के प्रयोग पर कोई सीमा, प्रतिबंध या शर्त नहीं लगाती है और अपीलीय अदालत तथ्य और कानून दोनों के प्रश्नों पर अपने निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले सबूतों पर विचार कर सकती है ।

(3) विभिन्न अभिव्यक्तियाँ, जैसे, "पर्याप्त और सम्मोहक कारण", "अच्छे और पर्याप्त आधार", "बहुत मजबूत परिस्थितियाँ", "विकृत निष्कर्ष", "स्पष्ट गलतियाँ", आदि का उद्देश्य किसी की व्यापक शक्तियों को कम करना नहीं है। दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील में अपीलीय अदालत। साक्ष्यों की समीक्षा करने और अपने स्वयं के निष्कर्ष पर आने की अदालत की शक्ति को कम करने की तुलना में अपीलीय अदालत की बरी करने में हस्तक्षेप करने की अनिच्छा पर जोर देने के लिए इस तरह की वाक्यांशविज्ञान "भाषा के उत्कर्ष" की प्रकृति में अधिक हैं।

(4) हालाँकि, अपीलीय अदालत को यह ध्यान में रखना चाहिए कि बरी होने की स्थिति में, अभियुक्त के पक्ष में दोहरी धारणा होती है। सबसे पहले, निर्दोषता का अनुमान उसे आपराधिक न्यायशास्त्र के मूल सिद्धांत के तहत उपलब्ध है कि प्रत्येक व्यक्ति को तब तक निर्दोष माना जाएगा जब तक कि वह सक्षम अदालत द्वारा दोषी साबित न हो जाए। दूसरे, आरोपी ने अपनी रिहाई सुनिश्चित कर ली है, उसकी बेगुनाही की धारणा को ट्रायल कोर्ट द्वारा और भी मजबूत, पुन: पुष्टि और मजबूत किया गया है।

(5) यदि रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य के आधार पर दो उचित निष्कर्ष संभव हैं, तो अपीलीय अदालत को ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज किए गए दोषमुक्ति के निष्कर्ष को परेशान नहीं करना चाहिए।

21. इसके अलावा मुरुगेसन बनाम राज्य के फैसले में , [(2012) 10 एससीसी 383], जिस पर अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील ने भरोसा किया था, इस न्यायालय ने मुकदमे में दर्ज दोषमुक्ति के खिलाफ अपील में उच्च न्यायालय की शक्तियों पर विचार किया है। अदालत। उक्त फैसले में, इस न्यायालय द्वारा स्पष्ट रूप से यह माना गया है कि केवल उन मामलों में जहां ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज निष्कर्ष एक संभावित दृष्टिकोण नहीं है, केवल उच्च न्यायालय ही हस्तक्षेप कर सकता है और दोषमुक्ति के फैसले को पलट सकता है। उक्त निर्णय में, "संभावित दृष्टिकोण" से "गलत दृष्टिकोण" या "गलत दृष्टिकोण" के बीच अंतर समझाया गया है। स्पष्ट शब्दों में, इस न्यायालय ने माना है कि यदि ट्रायल कोर्ट द्वारा लिया गया दृष्टिकोण "संभावित दृष्टिकोण" है, तो उच्च न्यायालय दोषमुक्ति के फैसले को पलट नहीं सकता है।

xxx xxx xxx

23. इसके अलावा, हकीम खान बनाम एमपी राज्य में , [(2017) 5 एससीसी 719] इस न्यायालय ने उन मामलों में हस्तक्षेप के लिए अपीलीय अदालत की शक्तियों पर विचार किया है जहां ट्रायल कोर्ट द्वारा दोषमुक्ति दर्ज की गई है। उक्त निर्णय में यह माना गया है कि यदि ट्रायल कोर्ट का "संभावित दृष्टिकोण" उच्च न्यायालय के लिए सहमत नहीं है, तब भी ट्रायल कोर्ट द्वारा दर्ज किए गए ऐसे "संभावित दृष्टिकोण" पर रोक नहीं लगाई जा सकती है। आगे यह माना जाता है कि जब तक ट्रायल कोर्ट का दृष्टिकोण तर्कसंगत रूप से बनाया जा सकता है, भले ही उच्च न्यायालय इससे सहमत हो या नहीं, ट्रायल कोर्ट के फैसले पर रोक नहीं लगाई जा सकती है और उच्च न्यायालय इस दृष्टिकोण का समर्थन नहीं कर सकता है। ट्रायल कोर्ट. फैसले का पैरा 9 इस प्रकार है; (एससीसी पृ.722-23)

“9. पक्षों के विद्वान वकील को सुनने के बाद, हमारा विचार है कि ट्रायल कोर्ट का फैसला दोषमुक्ति के निष्कर्ष पर पहुंचने के संभावित दृष्टिकोण से कहीं अधिक है, और अपराध के आरोपी सत्रह व्यक्तियों को दोषी ठहराना सुरक्षित नहीं होगा। हत्या अर्थात दंड संहिता की धारा 149 के साथ पठित धारा 302 के तहत। ट्रायल कोर्ट का सबसे महत्वपूर्ण कारण, जैसा कि ऊपर कहा गया है, यह था कि, सर्दियों की शाम 6.30 बजे से 7.00 बजे के समय को देखते हुए, अंधेरा होगा, और इसलिए, सत्रह व्यक्तियों की पहचान करना बेहद मुश्किल होगा। यह कारण, इस तथ्य के साथ मिलकर कि एकमात्र स्वतंत्र गवाह मुकर गया, और दो अन्य चश्मदीद गवाह जो स्वतंत्र थे, उनसे पूछताछ नहीं की गई, निश्चित रूप से अभियोजन की कहानी में एक बड़ा छेद पैदा करेगा। इसके अलावा, इस तथ्य से कि आरोपी पक्ष के तीन लोगों को चोटें आईं, जिनमें से दो की खोपड़ी में गहरी चोटें थीं, इससे यह निष्कर्ष निकलेगा कि कुछ भी पूर्व नियोजित नहीं था और पूरी संभावना है कि हाथापाई हुई थी जिसके कारण यह घटना हुई। दोनों तरफ चोटें. हालांकि प्रतिवादी के विद्वान वकील यह कहने में सही हो सकते हैं कि ट्रायल कोर्ट ने यह कहने में अति कर दी कि शिकायतकर्ता पक्ष हमलावर था, लेकिन बरी करने के लिए ट्रायल कोर्ट का अंतिम निष्कर्ष निश्चित रूप से इस मामले के तथ्यों पर एक संभावित दृष्टिकोण है। यह इस तथ्य से जुड़ा है कि सरगना सरपंच की उपस्थिति स्वयं इस तथ्य के मद्देनजर संदिग्ध है कि वह कुछ दूरी पर अदालत में उपस्थित हुआ था और घटना घटित होने के बाद बस से पहुंचा था।"

24. उपरोक्त सिद्धांतों और मौजूदा मामले में रिकॉर्ड पर मौजूद सबूतों को लागू करके, हमारा मानना है कि भौतिक विरोधाभासों को ध्यान में रखते हुए, जिन्हें हम पहले ही ऊपर देख चुके हैं और जैसा कि ट्रायल कोर्ट के फैसले में भी संदर्भित है, यह हो सकता है कहा कि दोषमुक्ति एक "संभावित दृष्टिकोण" है। इस न्यायालय द्वारा ऊपर बताए गए निर्णयों में निर्धारित अनुपात को लागू करने से, यहां तक कि एक और दृष्टिकोण भी संभव है, बरी करने के फैसले में हस्तक्षेप करने और कथित अपराध के लिए अपीलकर्ता को दोषी ठहराने का कोई आधार नहीं है। साक्ष्यों से यह स्पष्ट है कि जब निरीक्षण अधिकारी और अभियोजन पक्ष की ओर से

परीक्षण किए गए अन्य गवाह अपीलकर्ता-अभियुक्त के कार्यालय में गए, तो अपीलकर्ता कार्यालय में नहीं था और कार्यालय खुला था और लोग आ-जा रहे थे। अपीलकर्ता के कार्यालय से बाहर और अंदर। पीडब्लू 3, 5 और 11 के साक्ष्य से यह भी स्पष्ट है कि अपीलकर्ता ने उनके कहने पर मेज की दराज से मुद्रा और सेलफोन निकाल लिया था। इसका भी कोई कारण नहीं है, जब शाम 5.45 बजे अपीलकर्ता को दागी नोट और सेलफोन दिया गया तो कोई रिकॉर्डिंग नहीं की गई और शाम 7.00 बजे तक पीडब्लू 11 द्वारा अपीलकर्ता का परीक्षण नहीं किया गया।

10.उक्त सिद्धांतों को लागू करने और ट्रायल कोर्ट के साथ-साथ उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए फैसले को देखने के बाद, हमें लगता है कि यह एक ऐसा मामला है जहां उच्च न्यायालय ने कानूनी मापदंडों के भीतर काम नहीं किया है।

11.इस संबंध में, हम उच्च न्यायालय के निम्नलिखित पैराग्राफों पर ध्यान देना चाहेंगे, जिसमें वह अंतिम देखे गए सिद्धांत के संबंध में ट्रायल कोर्ट के विचारों से सहमत था:

“12. इस जिरह से विद्वान ट्रायल कोर्ट ने निष्कर्ष निकाला कि जवाहर सिंह द्वारा दिए गए आखिरी बार देखे गए साक्ष्य एक बाद के विचार और वास्तव में पूर्वव्यापी हैं जब मृतक के परिवार को मजबूत संदेह था कि रवि आरोपी था, बयान दिनांक मई 30, 2011 को पुलिस ने उसे आखिरी बार देखा गया गवाह बताते हुए पेश किया था। अशोक की जिरह के अवलोकन से उचित निष्कर्ष निकाला जा सकता है जैसा कि विद्वान ट्रायल कोर्ट ने निकाला है।

13. जांच अधिकारी इंस्पेक्टर विजय सिरोटिया पीडब्लू-14 ने अपनी जिरह में कहा है कि मृतक के पिता और भाई सुबह 7.30/7.45 बजे के आसपास घटनास्थल पर पहुंचे थे, हालांकि उस समय उन्होंने किसी का नाम नहीं बताया था। जिस व्यक्ति पर वे हत्या के अपराधी के रूप में संदेह कर सकते थे क्योंकि वे रो रहे थे और बुरी हालत में थे। उन्होंने कहा कि अशोक और जवाहर सिंह का बयान एक ही दिन यानी 30 मई 2011 को दोपहर में शव का पोस्टमार्टम होने के बाद दर्ज किया गया था. जिरह में उन्होंने कहा कि संदिग्ध का नाम बयान में संदिग्ध के किसी और पते के बिना आया था और इस प्रकार उस समय उसके घर का दौरा नहीं किया जा सका, हालांकि गवाहों ने कुछ गली नंबर के साथ-साथ घर का भी उल्लेख किया था नंबर लेकिन चूंकि यह एक कच्चा कॉलोनी था, इसलिए उक्त पते का पता लगाना मुश्किल था, जब तक कि गवाह या अन्य स्रोतों की मदद से पते का विशेष रूप से पता नहीं लगाया गया था।

14. अशोक कुमार और विजय सिरोटिया की इस जिरह के मद्देनजर हम यह नहीं मान सकते कि विद्वान ट्रायल कोर्ट का यह निष्कर्ष कि अंतिम बार देखा गया साक्ष्य विश्वसनीय नहीं है, विकृत है। हालाँकि दोनों ही दृष्टिकोण संभव हैं, तथापि विद्वान ट्रायल जज द्वारा लिया गया दृष्टिकोण भी एक प्रशंसनीय दृष्टिकोण है।

12.इस प्रकार, जब अंतिम बार देखा गया सिद्धांत सत्य नहीं पाया जाता है, तो अपीलकर्ता को फंसाने के लिए बहुत अधिक ठोस और पुख्ता सबूत होने चाहिए। PW1 मृतक का पिता है जिसने न केवल यह बताया कि मृतक और अपीलकर्ता के बीच कोई दुश्मनी नहीं थी, बल्कि यह भी कि उसे पिछले लेनदेन के बारे में पता नहीं था।

13. ट्रायल कोर्ट के विचारों को स्वीकार करते हुए कि अंतिम बार देखा गया सिद्धांत साबित नहीं हुआ है, साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि नहीं दी जा सकती है, जिसे पीडब्लू 2 के मुंह से मकसद के आधार पर खारिज कर दिया गया था। ट्रायल कोर्ट ने पीडब्लू2 के साक्ष्य को खारिज करने के अपने कारण बताए। उसे इस गवाह के आचरण को देखने और उसका आकलन करने का लाभ था, जो उच्च न्यायालय के पास नहीं था। PW2 ने कहा है कि पैसे का लेनदेन था जिसके कारण आरोपी और मृतक के बीच विवाद हुआ और उसने अपीलकर्ता को आश्वासन दिया था कि इसका भुगतान किया जाएगा। यह घटना की तारीख से कुछ दिन पहले भी हुआ था। जैसा कि ऊपर कहा गया है, जब हम परिस्थितिजन्य साक्ष्य के मामले से निपटते हैं, तो मकसद महत्वपूर्ण हो जाता है। हालाँकि, प्रत्यक्षदर्शियों से जुड़े मामले में मकसद महत्वहीन हो सकता है, लेकिन जब किसी आरोपी को परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर फंसाया जाता है तो ऐसा नहीं हो सकता है।

कानून की इस स्थिति को इस न्यायालय द्वारा तरसेम कुमार बनाम दिल्ली प्रशासन (1994) अनुपूरक 3 एससीसी 367 के मामले में निम्नलिखित शर्तों में निपटाया गया है:

"8. आम तौर पर, हर आपराधिक कृत्य के पीछे एक मकसद होता है और यही कारण है कि जांच एजेंसी के साथ-साथ अदालत भी किसी आरोपी की संलिप्तता की जांच करते समय यह पता लगाने की कोशिश करती है कि आरोपी का अपराध करने का मकसद क्या था। इस न्यायालय द्वारा बार-बार यह बताया गया है कि जहां अभियोजन का मामला अदालत के समक्ष प्रस्तुत सामग्री के आधार पर सभी उचित संदेहों से परे साबित हो गया है, वहां मकसद अपना महत्व खो देता है। लेकिन ऐसे मामले में जो परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित है, आरोपी की ओर से अपराध करने का मकसद अधिक महत्व रखता है। निःसंदेह, यदि अभियोजन पक्ष की ओर से साबित की गई प्रत्येक परिस्थिति को अदालत द्वारा यह निष्कर्ष दर्ज करने के उद्देश्य से स्वीकार कर लिया जाता है कि यह अभियुक्त ही था जिसने प्रश्नगत अपराध किया था, भले ही ऐसा अपराध करने के लिए किसी मकसद का सबूत न हो। अपराध, आरोपी को दोषी ठहराया जा सकता है। लेकिन जांच एजेंसी के साथ-साथ अदालत को भी जहां तक संभव हो यह पता लगाना चाहिए कि आरोपी का तत्काल प्रेरक मकसद क्या था जिसने उसे संबंधित अपराध करने के लिए प्रेरित किया। ....."

14. हमने पाया है कि केवल अपीलकर्ता को दोषी ठहराने वाले अप्रतिरोध्य निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कोई पर्याप्त लिंक नहीं है। हम परिस्थितिजन्य साक्ष्य के संबंध में कानून की स्थापित स्थिति को बढ़ाना नहीं चाहते हैं, पदाला वीरा रेड्डी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य , 1989 सप्लिमेंट (2) एससीसी 706 में निम्नलिखित निर्णय को उद्धृत करने के अलावा:

"10. विद्वान वकील द्वारा दी गई दलीलों पर ध्यान देने से पहले, हम सबसे पहले यह बताएंगे कि वर्तमान मामले में आरोपी को विचाराधीन अपराध से जोड़ने के लिए कोई प्रत्यक्ष सबूत नहीं है और अभियोजन पक्ष अपना मामला पूरी तरह से परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर टिका हुआ है। इस न्यायालय ने कई निर्णयों में लगातार यह माना है कि जब कोई मामला परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित होता है तो ऐसे साक्ष्य को निम्नलिखित परीक्षणों को पूरा करना चाहिए:

"(1) जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, उन्हें सुसंगत और दृढ़ता से स्थापित किया जाना चाहिए;

(2) वे परिस्थितियाँ एक निश्चित प्रवृत्ति की होनी चाहिए जो त्रुटिहीन रूप से अभियुक्त के अपराध की ओर इशारा करती हों;

(3) परिस्थितियों को, संचयी रूप से लेते हुए, इतनी पूर्ण श्रृंखला बनानी चाहिए कि इस निष्कर्ष से कोई बच न सके कि सभी मानवीय संभावनाओं के भीतर अपराध अभियुक्त द्वारा किया गया था और किसी और ने नहीं; और (4) दोषसिद्धि को बनाए रखने के लिए परिस्थितिजन्य साक्ष्य पूर्ण होने चाहिए और अभियुक्त के अपराध के अलावा किसी भी अन्य परिकल्पना की व्याख्या करने में असमर्थ होने चाहिए और ऐसे साक्ष्य न केवल अभियुक्त के अपराध के अनुरूप होने चाहिए बल्कि असंगत भी होने चाहिए। उसकी मासूमियत. (गंभीर बनाम महाराष्ट्र राज्य देखें [(1982) 2 एससीसी 351]."

15. हालाँकि, एक बार फिर, हम कानून की स्थापित स्थिति को दोहराना चाहेंगे कि केवल संदेह, चाहे वह कितना भी मजबूत क्यों न हो, स्वीकार्य साक्ष्य का विकल्प नहीं हो सकता है, जैसा कि चंद्रकांत गणपत सोवितकर बनाम महाराष्ट्र राज्य में कहा गया है , (1975) 3 एससीसी 16।

"16. .....यह अच्छी तरह से स्थापित है कि केवल संदेह के आधार पर किसी को दोषी नहीं ठहराया जा सकता, चाहे वह कितना भी मजबूत क्यों न हो। इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि जब हम किसी आरोपी के आचरण पर विचार करते हैं तो उसके आचरण को संपूर्णता में देखना चाहिए। ....."

16.की गई वसूलियों पर बहुत अधिक निर्भरता बनाई गई है। जब अवलोकन महाज़ार को स्केच के साथ तैयार किया गया और पूछताछ की गई, तो निश्चित रूप से, कई व्यक्ति उपस्थित

थे। किसी भी स्वतंत्र गवाह से हस्ताक्षर नहीं करवाए गए और अभियोजन पक्ष की ओर से यह सबूत कि उन्होंने स्वेच्छा से ऐसा नहीं किया, स्वीकार नहीं किया जा सकता। कभी-कभी जब किसी गवाह से प्रत्यक्षदर्शी के रूप में कार्य करने के लिए कहा जाता है तो वह साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए आगे नहीं आ पाता है। हालाँकि, जब शव के पास बड़ी संख्या में लोग मौजूद थे, तो यह समझ से परे है कि उन सभी ने पुलिस द्वारा तैयार दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने से कैसे इनकार कर दिया।

17. इसी तरह, ट्रायल कोर्ट ने अधिनियम की धारा 27 के तहत वसूली पर संदेह किया । PW2 को ले जाने और उसके बाद उससे हस्ताक्षर कराने की कोई आवश्यकता नहीं थी।

प्रस्तुत साक्ष्यों में बहुत विरोधाभास हैं। PW2 ने कहा है कि बरामदगी के समय कई व्यक्ति उपलब्ध थे, लेकिन उनमें से किसी से भी कोई बयान प्राप्त नहीं किया गया है। पीडब्लू11, हेड कांस्टेबल का कहना है कि जांच अधिकारी पीडब्लू14 ने किसी भी पड़ोसी को जांच में शामिल होने के लिए नहीं कहा। पीडब्लू8, जो पुलिस उप-निरीक्षक है, ने गवाही दी है कि कोई भी आगे नहीं आ रहा था। इसी तरह का बयान जांच अधिकारी ने भी दिया. उस स्थान पर यात्रा करने के तरीके में विसंगति है जहां से अधिनियम की धारा 27 के तहत गवाहों, अर्थात् पीडब्लू 2, 8, 11 और 14 के तहत वसूली की गई थी। जबकि पीडब्लू2 ने कहा है कि पुलिस टीम ने एक का इस्तेमाल किया था। जीप और मोटरसाइकिल. दूसरे गवाह ने कहा है कि यह या तो मोटरसाइकिल थी या पैदल, जबकि एक गवाह का कहना है कि यह जिप्सी थी। हमें प्रकटीकरण विवरण के बाद गिरफ्तारी के स्थान के संबंध में विरोधाभास मिलते हैं।

18. बैलिस्टिक विशेषज्ञ की रिपोर्ट स्पष्ट रूप से एक राय की प्रकृति में एक वैज्ञानिक प्रमाण है। इस साक्ष्य का उपयोग उपलब्ध अन्य महत्वपूर्ण साक्ष्यों के साथ करना आवश्यक है। अपराध करने के लिए अपीलकर्ता की बंदूक के इस्तेमाल के संबंध में रिपोर्ट अनिर्णायक है।

19. उपरोक्त सभी पहलुओं को ट्रायल कोर्ट द्वारा निराधार माना गया है।

हमें इसमें कोई विकृति नहीं दिखती और कानून ट्रायल कोर्ट द्वारा उचित फैसले के बाद आरोपी के पक्ष में दोहरी धारणा मानता है। हमारा मानना है कि उच्च न्यायालय प्रथम दृष्टया न्यायालय द्वारा दिए गए बरी करने के आदेश को उलटने में धीमा हो सकता था।

20. उपरोक्त विश्लेषण पर, ट्रायल कोर्ट द्वारा बरी किए जाने को बहाल करते हुए, दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए दोषसिद्धि के आदेश को रद्द कर दिया जाता है।

अपीलें स्वीकार की जाती हैं।

.....।.....जे।

(अभय एस. ओकेए) .....जे.

(एमएम सुंदरेश) नई दिल्ली, 11 जुलाई 2022